# हिन्द स्वराज : ऐतिहासिक अनिवार्यता

नंद किशोर आचार्य

कवि, नाटककार, आलोचक एवं विचारक नंद किशोर आचार्य गांधीवाद के गम्भीर अध्येता के रूप में जाने जाते हैं। अज्ञेय द्वारा सम्पादित चौथा सप्तक में सम्मिलित कवि। महात्मा गांधी पर केन्द्रित *सभ्यता का विकल्प* गांधी को समझने की आधार पुस्तक के रूप में जानी जाती है।

किताबें सभ्यताओं की प्रेरक रही हैं। यह तो शायद कभी नहीं हुआ कि कोई सभ्यता किसी किताब से हू ब हू जीवन में रूपांतरित हुई हो क्योंकि मनुष्य के जीवन को किसी किताब में बंद नहीं किया जा सकता– लेकिन, एक बड़ी हद तक कोई किताब किसी सभ्यता की केन्द्रीय प्रेरक मानी जा सकती है। सभ्यता के प्रारम्भ से लेकर मध्यकाल तक यह केन्द्रीयता धार्मिक आध्यात्मिक किताबों की रही, जैसे वेद उपनिषद, बाइबिल, कुरआन आदि की। लेकिन मध्यकाल के बाद या कहें कि आधुनिक विज्ञान के विकास के साथ धार्मिक ग्रंथों की मान्यताओं के सवालों के घेरे में आ जाने के कारण (यद्यपि उनका महत्व तो बना रहा) सभ्यता का केन्द्रीय आधार होने की हैसियत उन्होंने खो दी। इसलिए सभ्यता का आधार भी धार्मिक किताबों के बजाय वे किताबें होनी स्वाभाविक थीं जिनका सम्बंध धार्मिक विश्वासों के बजाय हमारे भौतिक या कहें कि आर्थिक जीवन से होता। प्राकृतिक विज्ञान की दृष्टि से चार्ल्स डार्विन की *ऑरिजिन ऑफ दि स्पेसीज* का जिक्र भी किया जा सकता है, लेकिन फिलहाल मैं उन तीन किताबों का जिक्र करना चाहूंगा, जिनमें *हिन्द स्वराज* भी एक है जिन्हें आधुनिक काल की प्रेरक किताबें कहा जा सकता है।

इन तीन किताबों में पहली किताब है 1776 ई. में प्रकाशित एडम स्मिथ की *दि वैल्थ ऑफ नेशंस*। इस किताब के प्रकाशन के पूर्व यूरोप में रेनेसां के परिणामस्वरूप धार्मिक अंधविश्वासों से जकड़ी हुई मानसिकता एक तरह की स्वतंत्रता का अनुभव करने लगी थी और किसी भी तरह के आरोपित अनुशासन के बदले वैयक्तिक स्वतंत्रता की भावना बलवती हो रही थी। इंग्लैण्ड में प्रजातंत्र

के विकास, फ्रेन्च क्रांति और अमरीकी स्वतंत्रता संग्राम आदि घटनाओं की पृष्ठभूमि में भी वैयक्तिक स्वतंत्रता का यह बोध एक तात्विक आधार का काम कर रहा था। यह भी माना जाने लगा था कि आर्थिक स्वतंत्रता वैयक्तिक स्वतंत्रता के लिए एक आवश्यक आधारभूमि का काम करती है। जॉन लॉक जैसे विचारक की मान्यता थी कि सम्पत्ति का अधिकार स्वतंत्रता की रक्षा के लिए बहुत आवश्यक है। यह माना गया कि आर्थिक प्रक्रिया की स्वतंत्रता मानवीय स्वातंत्र्य धारणा का आर्थिक आयाम है, इसलिए उसमें राज्य या किसी बाहरी शक्ति का हस्तक्षेप मानवीय स्वातंत्र्य का अतिक्रमण है। यह भी माना गया कि यह हस्तक्षेप नैतिक ही नहीं, अर्थशास्त्रीय दृष्टि से भी अनुचित होगा क्योंकि बाजार की प्रतिस्पर्धा कीमतों को कम रखने और आर्थिक सेवाओं को अधिक कुशल बनाने में सहायक होगी, जिसका स्वाभाविक परिणाम होगा उपभोक्ता अर्थात् समाज को कम कीमत में अधिक कुशल उत्पाद या सेवा मिलना। आदर्श बाजार वह है जिसमें ग्राहक और उत्पादक, दोनों पक्षों को मोलतोल करने की पूरी स्वतंत्रता और शक्ति हो और ऐसा केवल मुक्त बाजार की अर्थव्यवस्था में ही सम्भव है। इन्हीं तर्कों के आधार पर एडम स्मिथ ने मुक्त बाजार की अवधारणा का प्रतिपादन किया। उनकी मान्यता थी कि उत्पादन में वृद्धि के साथ साथ रोजगार की सम्भावनाएं बढ़ती जायेंगी और यदि राज्य आर्थिक प्रक्रिया में कोई हस्तक्षेप न करे तो एक अदृश्य हाथ उत्पादन में विकास को लोगों के निम्नतम स्तर तक पहुंचा देगा। आजकल जिस उदारीकरण की नीति का बोलबाला है, उसका अर्थशास्त्रीय एवं तात्विक आधार एडम स्मिथ ने ही अपनी किताब में प्रस्तुत किया था। भूमंडलीकरण इस उदारीकरण का ही स्वाभाविक अनुज, बल्कि उसका अंतर्राष्ट्रीय अवतार है क्योंकि जिस तर्क के आधार पर किसी राष्ट्रीय स्तर की अर्थव्यवस्था में हस्तक्षेप अनुचित है, उसी आधार पर अंतर्राष्ट्रीय स्तर की अर्थव्यवस्था में भी राज्य का हस्तक्षेप अनुचित ही माना जायेगा।

भूमंडलीकरण के समर्थकों का तर्क यही है कि यदि कोई देश अपने यहां के उत्पादक बाजार को कुछ सब्सिडी देता या दूसरों की अपेक्षा अधिक सुविधाएं उपलब्ध करवाता है तो यह स्वस्थ प्रतिस्पर्धा को दबाना है, जिसका खमियाजा अंततः उपभोक्ता अर्थात् समाज को उठाना पड़ता है। इसलिए अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर मुक्त बाजार नैतिक और आर्थिक दोनों कसौटियों पर खरा उतरता है। यह मानवीय स्वातंत्र्य को आर्थिक क्रियाशीलता में प्रतिष्ठित करता है और समाज की आवश्यकताएं कम कीमतों में पूरी करने की गारंटी करता है।

दरअसल, एडम स्मिथ के तर्क के आधार पर जिस मुक्त बाजार का विकास हुआ, उसने स्वयं उसके निष्कर्षों को ही गलत साबित कर दिया। उत्पादन के विकास की दृष्टि से तकनीकी के विकास में श्रम की भूमिका के कमजोर होते चले जाने से रोजगार की सम्भावनाएं कमजोर होती चली गयी हैं और अर्थशास्त्रियों की राय में अब हम रोजगारविहीन विकास (जॉबलेस ग्रोथ) की स्थिति में आ रहे हैं अर्थात विकास का तात्पर्य उत्पादन में वृद्धि तो है, पर उसके साथ रोजगार के अवसरों की उपलब्धता घट रही है। यह स्थिति वास्तव में विकास की वर्तमान प्रक्रिया की विफलता का नहीं बल्कि उसकी सफलता का अनिवार्य परिणाम है। उत्पादन में वृद्धि विकास का लक्षण है और इस वृद्धि की दर को निरंतर बढ़ाते जाने के लिए नित नये तकनीकी परिवर्तनों की जरूरत पड़ती है। इसे अर्थशास्त्र की भाषा में *हाइरेट ऑफ डेवलपमेण्ट* (एचआरडी) कहा जाता है और इसे हासिल करने के लिए तकनीकी रूपांतरण (टेक्नोलोजिकल ट्रांसफोरमेशन) अनिवार्य है, जिसका तात्पर्य है ऐसी प्रौद्योगिकी को अपनाना जिसमें कम से कम मानवीय श्रम और सामाजिक समय के निवेश के माध्यम से अधिक से अधिक उत्पादन। इसका एक अनिवार्य परिणाम है रोजगार के अवसरों में कमी और रोजगार के अवसरों में कमी का अनिवार्य परिणाम है– समाज की क्रयशक्ति में कमी और जाहिर है कि क्रयशक्ति के अभाव में कोई उत्पादन वृद्धि टिकाऊ नहीं हो सकती, वह मंदी का शिकार होती रहेगी।

यदि हम यह बात भूल भी जायें कि उत्पादन में इस अंधाधुंध वृद्धि ने मार्सेले के अनुकरण

ा में कितनी कृत्रिम मांगों को जन्म दिया, पर्यावरण तथा पारिस्थितिकी का कितना नुकसान किया और आर्थिक प्रतिस्पर्धा के चलते दो महायुद्धों और जाने कितने छोटे छोटे युद्धों को जन्म दिया तथा बाजार को शस्त्रों से भर दिया है, तो भी केवल शुद्ध आर्थिक दृष्टि से भी इसने स्वयं एडम स्मिथ की मान्यताओं को भी झुठला दिया है।

एडम स्मिथ ने जब मुक्त बाजार और स्वस्थ प्रतिस्पर्धा की बात की थी, तब इस खतरे से भी सचेत किया था कि आर्थिक शक्ति का केन्द्रीकरण बाजार को वास्तविक अर्थों में स्वतंत्र नहीं रहने देगा। विडम्बना यह है कि राज्य के हस्तक्षेप के बिना आर्थिक केन्द्रीकरण को रोक पाना भी मुमकिन नहीं। एडम स्मिथ स्वयं बाजार से ऐसे बड़े प्रतिद्वंद्वियों को बाहर ही रखना चाहते थे, जो एकाधिकारवादी हो सकें। उदारीकृत भूमंडलीकरण में बाजार वास्तविक अर्थों में मुक्त होने के बजाय एकाधिकारवादी प्रवृत्तियों में घुटता जा रहा है। बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के आपसी समझौते बाजार को वास्तविक अर्थों में प्रतिस्पर्धात्मक नहीं रहने दे रहें हैं। भूमंडलीकरण के इस रूप को निगमात्मक भूमंडलीकरण (कॉरपा. ेरेट ग्लोबलाइजेशन) कहा जा रहा है। डेविड कोरटेन ने अपने अध्ययन *वेनकोरपोरेशंस रूल दी वर्ल्ड* में भलीभांति यह सिद्ध किया है कि बाहर से अलग दिखने वाली बहुराष्ट्रीय कम्पनियों और राष्ट्रीय कम्पनियों के आपसी सम्बंध जुड़ कर इस प्रकार घनिष्ठ हो चले हैं कि अब उन्हें वास्तविक अर्थो में प्रतिस्पर्धा कहना संगत नहीं होगा। अपने तर्क की पुष्टि के लिए कोरटेन कृषि बाजार की दो वैश्विक कम्पनियों कारगिल और आर्चर डेनिएस मिडलैण्ड की संयुक्त उद्यमिता का उदाहरण देते हैं, जिसका परिणाम यह हुआ है कि पहले खाने पर खर्च होने वाले प्रत्येक डालर का इकतालिस प्रतिशत जिस किसान को मिलता था, उसका अब केवल नौ प्रतिशत मिल पा रहा है, जबकि उपभोक्ता को पहले से अधिक चुकाना पड़ रहा है। प्रसिद्ध व्यापार प्रबंधक साइरस फ्रीडहीम का निष्कर्ष है कि कुछ ही अर्से में विश्व अर्थव्यवस्था का नियंत्रण जिस प्रवृत्ति से संचालित होगा, उसे संयुक्त उद्यमिता (रिलेशनशिप एंटरप्राइज) कहा जाना चाहिए। इस प्रकार के एकाधिकारवाद को राजसत्ता द्वारा भी नियंत्रित नहीं किया जा सकेगा क्योंकि स्वयं राज्य की शक्ति इनसे कम होगी, क्या कुछ वैसे ही जैसे भारत के देशी राज्यों की शक्ति ईस्ट इंडिया कम्पनी से कम हो गयी थी?

डेविड कोरटेन का कहना है कि आज की कॉरपोरेट व्यवस्था एक आयोजित प्रतिस्पर्धा का स्वांग रचती है। एक ओर वे आपस में जुड़ी रहती हैं और दूसरी ओर, परिधि पर रहने वाली छोटी कम्पनियों के बीच प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा देती रहती हैं और इसका परिणाम होता है कि लागत का बड़ा हिस्सा छोटी कम्पनियों को उठाना पड़ता है और लाभ का बड़ा हिस्सा कॉरपोरेट जगत को मिलता है। इसका एक और परिणाम होता है कि छोटी कम्पनियां या तो इस कॉरपोरेट भूमंडलीकरण में घुला ली जाती हैं या उसकी एजेण्ट हो जाती हैं।

दरअसल, एडम स्मिथ जिस मुक्त बाजार की बात कर रहे थे, वह विकेन्द्रीकृत अर्थव्यवस्था में ही सम्भव है। कींज ने भी कहा था कि दर्शन, कला, साहित्य आदि को तो वैश्विक संदर्भ में देखा जा सकता है, लेकिन उत्पाद तो होमस्पन होने चाहिए और अर्थव्यवस्थाएं राष्ट्रीय ही बेहतर है। कींज जिस होमस्पन की बात कर रहे हैं, वह केवल स्वदेशी में ही सम्भव है। वास्तविक लक्ष्य मानवीय स्वाधीनता है, जो कि न केवल नैतिक है, बल्कि मानवता के आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक कल्याण का भी आधार है। इसी अर्थ में नैतिक और आर्थिक परस्पराश्रित और परस्परपोषी होते हैं।

मैं जिस दूसरी किताब का जिक्र करने जा रहा हूं, वह है कम्युनिस्ट मैनीफेस्टो। एडम स्मिथ की अर्थव्यवस्था ने आर्थिक स्वातंत्र्य के तर्क के आवरण में पूंजी को तो बढ़ाया, पर अदृश्य हाथ उसे उचित तरह से निम्नतर स्तर तक पहुंचा नहीं पाया बल्कि पूंजी की प्रतिस्पर्धा ने न केवल युद्धों को जन्म दिया बल्कि विकास की अंधाधुंध दौड़ ने पृथ्वी को ही जहरीला बना दिया यानि न खुदा ही मिला, न विसाले सनम।

तद्भव

पूंजी के इस खेल को कार्ल मार्क्स और उनके मित्र फ्रेडरिक एंगेल्स ने बहुत अच्छी तरह समझते हुए एक विकल्प की ओर ध्यान आकर्षित किया। कम्युनिस्ट मैनीफेस्टो में उन्होंने एक ऐसे समाज की कल्पना की जिसमें उत्पादन के लाभ वास्तविक अर्थो में नीचे तक पहुंच सकें और मानवीय स्वतंत्रता पोषित हो सके। कम्युनिज्म को स्वतंत्रता का दमन करने वाल ा बताने वाले अक्सर यह भूल जाते हैं कि कम्युनिस्ट मैनीफेस्टो का लक्ष्य एक ऐसे समाज की स्थापना करना है जिसमें प्रत्येक का स्वतंत्र विकास सबके स्वतंत्र विकास की अनिवार्य शर्त है, जाहिर है कि एडम स्मिथ की ही तरह यहां भी केन्द्रीय मूल्य स्वतंत्रता है, जो उत्पादन के लाभों को निम्नतम स्तर तक पहुंचा पाने पर सम्भव होती है। मैनीफैस्टो की राय में मानवीय स्वतंत्रता के मार्ग में सबसे बड़ी बाधा है समाज का वर्ग विभक्त होना जिसमें उत्पादन के साधनों का स्वामी वर्ग दूसरे वर्ग का शोषण दमन करता है और उसे वास्तविक स्वतंत्रता से वंचित रखता हे। मैनीफैस्टो चाहता है कि यह वंचित वर्ग क्रांति के द्वारा राजसत्ता पर अधिकार कर ले और तब राजसत्ता की मदद से एक ऐसी आर्थिक प्रक्रिया का विकास करे जिसमें वर्ग न बन सकें। मार्क्स के अनुसार राज्य वर्गहितों की रक्षा के लिए आवश्यक है, इसलिए जब वर्ग नहीं होगा तो राज्य का भी लोप हो जायगा। यह एक वास्तविक स्वतंत्र समाज होगा।

कम्युनिस्ट मैनीफैस्टो इस अवधारणा को इतिहास के अपने विश्लेषण के माध्यम से एक वैज्ञानिक आधार देने का प्रयास करता है। मार्क्स की शायद सर्वाधिक अंतर्दृष्टिपूर्ण स्थापना यह है कि सामाजिक अधिरचना का आधार उत्पादन सम्बंध होते हैं जो उत्पादन के साधनों अर्थात तकनीकी में परिवर्तन के साथ बदल कर नयी अधिरचना का आधार बनते हैं।

मार्क्स की यह मान्यता इतिहासकारों के उस वर्ग से मिलती है जो मानव जाति के विकास का अध्ययन तकनीकी विकास की दृष्टि से करता है। इन इतिहासविदों की मान्यता है कि एक नयी तकनीकी का आविष्कार मनुष्य के लिए परिवर्तन की नयी सम्भावनाएं प्रकट करता है और न केवल उसकी उत्पादन पद्धति और अर्थव्यवस्था उससे बदल जाती है, बल्कि उसका असर समूची सामाजिक संरचना और संस्कृति पर पड़ता है। यानी तब स्वतंत्रता और समानता मूल्य नहीं रहते मूल्य हो जाती हैं सुविधाएं।

स्पष्ट है कि वैल्थ ऑफ नेशंस और कम्युनिस्ट मैनीफेस्टो दोनों के आधार पर समाज रचना के प्रयत्न तो हुए पर वे उन मूल्यों के ही विरोधी हो जाने के कारण असफल हो गये हैं, जिनकी व्यावहारिक सिद्धि को उन्होंने अपना साध्य माना था। इसलिए यह स्वाभाविक ही लगता है कि मानवता एक नये विकल्प की तलाश में हो– एक ऐसा विकल्प जो एक वैकल्पिक प्रौद्योगिकी पर आधारित हो, जो अपने लक्ष्य में ही नहीं, अपनी प्रक्रिया में भी स्वतंत्रता और समानता को महत्व देता हो। आधुनिक भौतिकी ने भी अब तो यह स्पष्ट कर दिया है कि तत्व और प्रक्रिया अंततः अभेदसिद्ध हैं। तत्व और प्रक्रिया के इस अभेदत्व की आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक सिद्धि तभी सम्भव है, जब एक स्वतंत्र और नैतिक समाज का विकास करने के लिए एक ऐसी आर्थिक, राजनीतिक तकनीकी का विकास किया जाय जो अपने फल में ही नहीं, अपनी प्रक्रिया में भी स्वतंत्रता, स्थानीय पहल और सत्ता के विकेन्द्रीकरण को पुष्ट करने वाली हो।

इसी दृष्टि से *हिन्द स्वराज* एक विकल्प प्रस्तुत करने वाली किताब है। कह सकते हैं कि यह भी एक ऐसी किताब है जो स्वतंत्रता और समता को बुनियादी नैतिकता के रूप में स्वीकार करती है, लेकिन, उन्हें दूरगामी फल की तरह नहीं, बल्कि फल तक पहुंचने की प्रक्रिया में ही सिद्ध करना चाहती है। इसलिए गांधी व्यवस्था परिवर्तन तो चाहते हैं, लेकिन व्यवस्था पर काबिज होकर नहीं, बल्कि उसकी प्रक्रिया को ही बदल कर। दरअसल, एक स्वतंत्र और समताशील समाज का मतलब है एक अहिंसक समाज, एक सत्याग्रही समाज क्योंकि सत्य और अहिंसा अंततः एक ही सिक्के के दो पहलू हैं या कहें कि अहिंसा ही सत्य का व्यावहारिक रूप है। यदि स्वतंत्रता या समानता सत्य हैं तो अहिंसा ही उनका

भी व्यावहारिक रूप हो सकती है।

स्पष्ट है कि यदि शोषण और दमन उत्पीड़न से मुक्त समाज के सपने को किसी सीमा तक सच होना है तो उसके लिए उसी वैकल्पिक प्रौद्योगिकी और राज्यतंत्र के विकास की दिशा में प्रयत्नशील होना होगा जिसका बीज संकेत हिन्द स्वराज में मिलता है। गांधी जी इस बात को अच्छी तरह समझते थे और इसीलिए उन्होंने आधुनिकतावादी प्रौद्योगिकी पर आश्रित सभ्यता को शैतानी सभ्यता और संसदीय लोकतंत्र को बांझ और वेश्या कह कर परिभाषित किया था। हिन्द स्वराज के आखिर में स्वराज को परिभाषित करते हुए गांधी जी तीन मुख्य बातें कहते हैं–

1. अपने मन का राज्य स्वराज्य है।
2. उसकी कुंजी सत्याग्रह, आत्मबल या करुणा बल है।
3. उस बल को आजमाने के लिए स्वदेशी को पूरी तरह अपनाने की जरूरत है।

इन तीनों सूत्रों में महात्मा गांधी एडम स्मिथ और मार्क्स के बरक्स एक अहिंसक समाज के विकल्प का प्रस्ताव करते हैं। जिसकी व्याख्या हिन्द स्वराज है। अर्थव्यवस्था के क्षेत्र में उत्पादन वृद्धि अपने आप में गांधी जी के लिए कोई लक्ष्य नहीं है वह एक अर्थशास्त्री के रूप में हमारा ध्यान इस बात की ओर आकर्षित करते हैं कि उत्पादन का लक्ष्य हमारी बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति करना है, न कि उपभोग की कृत्रिम मांगों के जाल में फंसना। केवल भौतिकवादी दृष्टि अर्थात् अर्थव्यवस्था और शारीरिक, मानसिक स्वास्थ्य की दृष्टि से भी महात्मा गांधी के प्रस्ताव की प्रासंगिकता से इनकार नहीं किया जा सकता। यह भी स्मरणीय है कि अपरिग्रह या त्यागपूर्वक भोग इस संदर्भ में केवल नैतिक, आध्यात्मिक उपदेश नहीं, बल्कि आर्थिक आवश्यकता बन जाते हैं क्योंकि परिग्रह या कृत्रिम उपभोग की लालसा ही मांगों को अनियंत्रित करती है। उसमें बुनियादी जरूरतों का तिरस्कार नहीं है क्योंकि गांधी मानसिक स्वास्थ्य के साथ शारीरिक स्वास्थ्य पर भी पूरा जोर देते हैं। कम लोग महात्मा गांधी के उस कथन के बारे में जानते होंगे जिसमें वह कहते हैं कि *'गरीबों के लिए तो ईश्वर रोटी और मक्खन के रूप में ही प्रकट हो सकता है।'* उनका तो यहां तक कहना है कि गरीबों के लिए आर्थिक ही आध्यात्मिक है। इसलिए महात्मा गांधी भी उत्पादन बढ़ाने पर तो जोर देते हैं, लेकिन कृत्रिम मांगों के बजाय बुनियादी जरूरतों के लिए। इस उत्पादन वृद्धि की प्रक्रिया या प्रौद्योगिकी भी वही वरेण्य हो सकती है जो रोजगार के पर्याप्त अवसर जुटा सके। हमारे आधुनिक अर्थशास्त्रियों का मानना है कि आधुनिक प्रौद्योगिकी को अपनाये बिना उत्पादन वृद्धि नहीं हो सकती। लेकिन, जैसाकि हम देख चुके हैं, यह प्रौद्योगिकी (जॉबलेस ग्रोथ) रोजगारविहीन विकास की ओर ले जाने वाली है, जो आर्थिक दृष्टि से हानिकारक है। गांधी जी, इसके बरक्स, जब स्वदेशी प्रौद्योगिकी का प्रस्ताव करते हैं तो वह उत्पादन वृद्धि के साथ साथ रोजगार को बढ़ाने वाला प्रस्ताव भी हो जाता है। आधुनिक प्रौद्योगिकी के आधार पर होने वाले उत्पादन में, शुमाकर के निष्कर्ष के अनुसार, हमारे सामाजिक समय का केवल साढ़े तीन प्रतिशत हिस्सा ही वास्तविक उत्पादन में लगता है।

स्वदेशी प्रौद्योगिकी के कई रूप हो सकते हैं, मुख्य बात इतनी ही है कि वह मानव श्रम एवं स्थानीय संसाधनों और जरूरतों को उचित महत्व देती हो। चाहें तो उसको सत्याग्रही या अहिंसक प्रौद्योगिकी भी कह सकते हैं क्योंकि आग्रह शब्दों पर नहीं, उस दृष्टि पर है जो रोजगार, उत्पादन, और वास्तविक जरूरत को अहिंसा के एक सूत्र में बांध देती है। इसलिए मुख्य सवाल उस प्रौद्योगिकी को चुनने का है, जिसे हम अपनी आर्थिक प्रक्रिया का आधार बनाते हैं क्योंकि अंततः वही सारी सामाजिक संरचना का भी आधार होगी। दरअसल, स्वदेशी प्रौद्योगिकी ही वह आर्थिक बेस है जिस पर एक अ. हंसक या वास्तविक अर्थों में स्वतंत्र समाज का सुपर स्ट्रक्चर खड़ा हो सकता है, जिसका सपना एडम स्मिथ और कार्ल मार्क्स ने देखा था। फर्क यह रहा और जो कम महत्वपूर्ण नहीं था कि वे इस सपने को उसकी अपनी प्रक्रिया में नहीं बल्कि उसकी विरोधी प्रक्रिया के परिणामस्वरूप पाना चाहते थे जो

तद्भव



tadbhav.com home page

इतिहास में कभी सम्भव नहीं होता। महात्मा गांधी जब सत्य को ईश्वर कहते और स्वराज्य की कुंजी सत्याग्रह को बताते हुए उसे आजमाने के लिए स्वदेशी को अपनाने की बात करते हैं तो स्वयमेव यह स्पष्ट हो जाता है कि स्वदेशी पर आधारित व्यवस्था ही सत्याग्रही अर्थात् ईश्वरीय नियम की व्यवस्था है। सम्भवतः किसी भी अध्यात्मवादी या भौतिकवादी विचारक ने भौतिक उत्पादन के साधनों पर इतना बल नहीं दिया होगा जितना हिन्द स्वराज का लेखक देता है क्योंकि वह जानता है कि गरीबों के लिए आर्थिक ही आध्यात्मिक है, और प्रौद्योगिकी आर्थिक अर्थात् गरीबों की आध्यात्मिक प्रक्रिया का आधार है। सत्याग्रह जैसे राजनीति में धर्म का समावेश है वैसे ही स्वदेशी आर्थिकी में आध्यात्मिकता का समावेश। हमारी आधुनिकतावादी प्रौद्योगिकी ने एडम स्मिथ और मार्क्स के सपनों के बावजूद आज हमें जिस परिस्थिति में ला खड़ा किया है उसके दुबारा वर्णन की जरूरत नहीं है। उससे उबरने का एक ही विकल्प सम्भव है और वह है उस प्रौद्योगिकी को अपनाना जिसका संकेत हिन्द स्वराज का लेखक करता है। हम गांधी जी के अन्य दार्शनिक विश्वासों से सहमत असहमत हो सकते हैं, लेकिन एक अहिंसक समाज के लिए अहिंसक प्रौद्योगिकी की आवश्यकता को और नहीं टाला जा सकता। इन्हीं अर्थों में हिन्द स्वराज एक ऐतिहासिक अनिवार्यता है, यदि हम उस दुश्चक्र से निकलना चाहते हैं, जिसमें इतिहास ने हमें ला फंसाया है।